Received: Aug '23
Revised:
Accepted: Sep '23

© 2023 by the authors. This article is an open access article distributed under the terms and conditions of the Creative Commons Attribution (CC BY) license (https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/).

MUSICAL ELEMENTS IN MEDIAEVAL HINDI POETRY AND VIDYAPATI'S PHRASEOLOGY
मध्यकालीन हिंदी काव्य और विद्यापति की पदावली में संगीत तत्व

Surender Kumar
Assitant Professor, K.R. Girls College, 16 B.G.P. Bolanwali (Sangaria), Hanumangarh
E-mail: suren.kashyap29812@gmail.com

ABSTRACT

Vidyapati has been popular in Bihar, Bengal, Orissa, and Assam for hundreds of years. Vidyapati's phraseology is the basis of his eternal fame. Even today, after hundreds of years, his phraseology is as ingrained in the folk voice as it was centuries ago. Vidyapati is a poet of the celebration of life in public life. That is why every occasion of life—birth-death, passion-dispassion, joy-dispute, meeting-separation, worship, folk festival-festival—is in his poetry. His poetry, full of folk life and practicality, is imbued with the essence of miraculous musicality, full of elegant meaning and seriousness. Musicality is a natural quality of his poetry.

विद्यापति बिहार, बंगाल, उड़ीसा और असम में सैकड़ों वर्षों से लोकप्रिय है। विद्यापति की पदावली उनकी अक्षय कीर्ति का आधार है। आज सैकड़ों वर्षों के बाद भी उनकी पदावली लोक कंठ में वैसी ही रची–बसी है जैसे वह शताब्दियों पहले थी। विद्यापति लोक जीवन में जीवनोत्सव के कवि हैं तभी तो जीवन के प्रत्येक अवसर जन्म–मृत्यु, राग–विराग, हर्ष–विवाद, मिलन–विरह, पूजा पाठ, लोकोत्सव–पर्वोत्सव हर प्रकार के गीत उनकी पदावली में है। लोक जीवन, व्यावहारिकता से परिपूर्ण उनकी पदावली लालित्यपूर्ण अर्थगांभीर्य से लबरेज चामत्कारिक सांगीतिकता के रस से सिक्त है। संगीतात्मकता उनकी पदावली का स्वाभाविक गुण है।

भारतीय श्रृंगार और भक्ति परंपरा के श्लाकापुरुष विद्यापति हिंदी साहित्य के प्रमुख स्तंभ हैं। राधाकृष्ण के प्रेम और भक्ति में पगी उनकी पदावली के कारण ही लोकहृदय और विद्वत समाज ने उन्हें 'मैथिल कोकिल', 'अभिनव जयदेव', 'नवकवि शेखर' आदि विरुदों से विभूषित किया है। यदि कालक्रम की दृष्टि से देखा जाए तो विद्यापति हिंदी साहित्य के आदिकाल और मध्यकाल के संधि कवि कहलाते हैं। साक्ष्यों के अभाव में विद्यापति के जन्म और मृत्यु का कालक्रम निश्चित नहीं किया जा सकता परंतु आधुनिक समय में हुए शोध के परिणाम स्वरुप अनुमान भर लगाया जा सकता है। विद्यापति के जन्म और मृत्यु के संबंध में विभिन्न विद्वानों में मतभेद है। विद्यापति पर उल्लेखनीय अनुसंधान करने वाले मूर्धन्य विद्वानों ने उनके जन्म तथा मृत्यु के संबंध में अपना–अपना मत दिया है– ''डॉ. जयकांत मिश्र के अनुसार विद्यापति का जन्म 1350 ईस्वी में, डॉ. सुभद्र झा के अनुसार 1352 ईस्वी में, पंडित हरप्रसाद शास्त्री के अनुसार 1357 ईस्वी में, नागेंद्रनाथ गुप्त के अनुसार 1358 ईस्वी में, डॉ. बाबूराम सक्सेना ने अनुमानतः 1360 ईस्वी में, डॉ. उमेश मिश्र ने 1368 ईस्वी में और डॉ. विमानबिहारी मजूमदार ने 1380 ईस्वी में माना है। डॉ. सुभद्र झा ने विद्यापति का मृत्यु काल 1448 ईस्वी, डॉ. जयकांत मिश्र ने 1450 ईस्वी, डॉ. विमानबिहारी मजूमदार ने 1460 ईस्वी और डॉ. उमेश मिश्र ने 1475 ईस्वी माना है।'' अतः कहा जा सकता है कि विद्यापति 1385 से 1460 ईस्वी के मध्य वर्तमान थे। इन मतों का अवलोकन करने से विद्यापति का समय हिंदी साहित्य के आदिकाल का अंत और मध्यकाल का प्रारंभ ही ठहरता है जिसे संधि काल की संज्ञा दी जा सकती है और इसी आधार पर विद्यापति को संधि काल का कवि कहा जाता है। यही हिंदी कविता के मध्यकाल का प्रस्थान बिंदु भी कहलाता है, अतः यदि विद्यापति को हिंदी कविता के मध्यकाल का प्रस्थान बिंदु कहा जाए तो कोई त्रुटि न होगी।

लोक और साहित्य के स्तर पर विद्यापति बिहार, बंगाल, उड़ीसा और असम में सैकड़ों वर्षों से लोकप्रिय हैं विद्यापति की पदावली उनकी अक्षय कीर्ति का आधार है। आज सैंकड़ों वर्षो के बाद भी उनकी पदावली लोक कंठ में वैसी ही रची बसी है जैसे वह शताब्दियों पहले थी। बंगाल, बिहार, उड़ीसा और असम में आज भी उनके गीतों को मुक्त कण्ठ से गाया जाता है। विद्यापति लोक जीवन मे जीवनोत्सव के कवि तभी तो जीवन के प्रत्येक अवसर जन्म–मृत्यु, राग–विराग, हर्ष–विषाद, मिलन–विरह, पूजा पाठ, लोकोत्सव–पर्वोत्सव हर प्रकार के गीत उनकी पदावली में है। लोक जीवन, व्यावहारिकता से परिपूर्ण उनकी पदावली लालित्यपूर्ण अर्थगांभीर्य से लवरेज, चमत्कारिक सांगीतिकता के रस से सिक्त है। मिथिलांचल में पदावली का गायन वहां के निवासियों का जीवन का अभिन्न अंग बन गया है। संगीतात्मकता उनकी पदावली का स्वाभाविक गुण है।

विद्यापति की पदावली का लोक और साहित्य में समान रूप से आदर और सम्मान मिला है। जिसका श्रेय उनके गीतों में व्याप्त संगीतात्मकता को ही है। संगीत तत्व काव्य का आवश्यक तत्व है, और पदावली में यह संगीत तत्व अपने विशिष्ट और अनुपम रूप से विद्यमान है। संगीत की अनेकानेक सरिताएं उनके गीतों में प्रवाहित हुई है, मानों स्वयं वाग्देवी विद्यापति की लेखनी के साथ नृत्य विहार करती हुई अवतरित हुई है। यमुना तट पर कृष्ण राधा से मिलने के लिए संकेत स्थल पर प्रतीक्षारत हैः–

''नन्दक नंदन कदम्बक तरू–तर

धिरे–धिरे मुरलि बजाव
समय संकेत निकेतन बइसल
बेरि–बेरी बोलि पाठव''[1]

नंदक नंदन शब्द से कृष्ण के मदोन्मत्र यौवन से मचलती हुई अपरिमित सुनहली कामनाएं ओर देह गठन की कोमलता ध्वनित होती है।

विद्यापति बहुत बड़े विद्वान, कुशल कवि और संगीत मर्मज्ञ थे। उनके अनेक पद और गीत इसके प्रत्यक्ष प्रमाण है। विद्यापति के गीतों की सबसे बड़ी विशेषता है, संगीतात्मकता[2] संगीतात्मकता ही उनके भाषा के प्राण है। पदावली कोमल कान्त शब्दावली श्रृंगार और भक्ति के सर्वथा अनुकूल है जिसे लय और ताल के कोमल तन्तुओं से बड़ी बारीकी के साथ मुक्तामाला की भॉति पिरोया गया है। पदावली का यह संगीत केवल शास्त्रीय संगीत नहीं बल्कि लोक मानस का स्वाभाविक संगीत है जो युगों–युगों से लोकमानस में रचा–बसा है और जिसके लिए कवि को किसी कृत्रिमता की आवश्यकता भी नहीं है। संगीत गीतों में दो प्रकार से संलक्ष्य हो सकता है। एक तो यह है कि वे गीत विभिन्न बाद्यों के साथ किसी प्रणाली में गाये जा सकते है। दूसरा यह कि संगीत की मूल भूत विशेषता यानि लय ओर उसकी आत्मा की गीतों में अवस्थिति। स्पष्टतः यों कहा जा सकता है कि बहुत से गीत शास्त्रीय संगीत में गाये जा कर या कवि द्वारा निश्चित राग रागिनी में आबद्ध होकर संगीत का विषय बनते है। किन्तु ये गीत ऐसे है जिन्हें असंगीतज्ञ मनुष्य भी अपने मन में दुहरा कर उनकी लयमयता से उनके भीतर निहित संगीतात्मक तत्व से आनन्द प्राप्त करता है। विद्यापति स्वयं एक बहुत बड़े संगीतज्ञ थे। विद्यापति अपने अनेक पदों के अन्त में **''विद्यापति कवि गाओल''** ही लिखते है परन्तु उनके स्वयं के गायक होने के कोई अन्य प्रमाण नहीं मिलते है।

गीत की जानकारी का पता दो प्रकार से चलता है। एक तो कवि ने अपने गीतों के लिए राग–रागिनियों का निर्णय कर दिया है। डॉ. सुभद्र झा द्वारा संपादित **''विद्यापति गीत संग्रह''** में जितने भी पद दिए हुऐ है वे सभी रागबद्ध है। इस संग्रह के आरम्भिक 56 गीत मालव राग में 57 से 130 तक के गीत धनाक्षरी राग में, 131 से 135 तक आसावरी राग में, 136 से 146 तक मालारी राग (मल्हार) में, 147 वां सामरी राग में, 148 से 154 तक अहिरानी राग में, 155 से 157 तक राग केदार में, 158 से 162 तक कानड़ा राग में, 163 से 195 तक कोलार राग में, 194 से 202 तक राग सारंगी में, 203 से 207 तक गुंजरी राग तथा आगे भी कई पद बसंत विभास नाट राग, ललित, वरली आदि रागों में दिए हुए है। ये राग कवि द्वारा निर्धारित हो सकते है, किसी दूसरे संगीतज्ञ द्वारा भी ये राग बद्ध किए गए, ऐसा भी हो सकता है।[3] परन्तु इसकी सम्भावना नगण्य है क्योंकि विद्यापति ने कुछ गीतों में शब्दों के साथ वाद्य यंत्रों और स्वरों को भी दे दिया है जैसे ये गीत गाये जाने के लिए ही लिखे गये थेः–

यथा– ''वाजत द्रिगि–द्रिगि धोद्रिम द्रिमिया
नटति कलावति माति श्याम संग
कर कर ताल प्रबन्धक ध्वनिया
डम–डम डफ डिमिक डम मादल
रूनझुन मंजीर बोल
किंकिनि रनरनि बलआ कनकनि
निधुवन रास तुमुल उतरोल
बीन रवाब मुरज स्वर मंडल
सा रि, गम प ध नि सा बहु निधि भाव
घटिता–घटिता धुनि मृदंग गरजनि
चंचल स्वर मंडल करू राव ''

ऐसे पदों को देखने से विद्यापति केवल संगीत प्रेमी नहीं बल्कि संगीतज्ञ प्रतीत होते है [4] विद्यापति के अनेकानेक ऐसे गीत भी मिलते है जो संगीत तत्व के भरोसे नहीं है वे तो मानव मन में रचे बसे स्वाभाविक संगीत से ही आनन्द की अनुभूति करवाने वाले है। ये आत्मा के संगीत की अनुभूति वाले गीत है। जो किसी शास्त्रीय संगीत के मोहताज नही है। मन में सहज उत्पन्न होने वाले भावों की अभिव्यक्ति के लिए आवश्यक लय के रूप को लेकर रचे गये ये गीत मानव मन के भावों से अतिशीघ्र एक रूपता स्थापित कर लेते है और मानव हृदय की स्वाभाविक उपज प्रतीत होते है। इस प्रकार गीत संगीत की सैद्वांतिक परिभाषा के निम्न धरातल से कहीं ऊपर उठकर मानव मन में अवस्थित भावों के शाश्वत संगीत से प्रेरित होते है। इन पदों में शब्द और अर्थ की गुरूता नहीं होती, इनके शब्द अत्यंत सहज और बहुत प्रचलित सांकेतिक ढंग से भाव की अभिव्यक्ति के लिए प्रयुक्त होते आ रहे है इसी कारण ऐसे पदों में भाव की अभिव्यक्ति शब्द से नहीं लय की आत्मा के आधार पर होती है।

''कंज भवन संग निकसलि रे रोकल गिरधारी
एकहि नगर बस माधव रे
जानिका बटमारी
छाड़ कन्हैया मार ऑचर रे
फाटत नव सारी
अपजस हो एत जगत भरि रे
जनि करिअ उधारी
हम एकसरि नारी
संग क सखी अगुआइल रे
दामिनि आए तुकाइल रे
एक राति अंधियारी''[5]

संपूर्ण पद में उल्लास भरा आग्रह है। बार–बार लय की टूटती उठती मनुहार और इन सबके उपर ऐसे सहज शब्दों के प्रयोग जो इस गीत को प्राणवान बनाते है। [6]

काव्य और संगीत का सुन्दर समन्वय विद्यापति के गीतों की अनूंठी विशेषता है जिसके दर्शन इन पंक्तियों में होते हैं।

''भल हर भल हरिमल तुअ कला
खन पितबसन खनहि बधछाला''[7]

काव्य में अंत्यानुप्रास (तुक) का बड़ा महत्व है। सुन्दर ध्वनि चित्र हो या संगीत तत्व अन्त्यानुप्रास अपने आप में अलग ही महत्व रखता है। बिना अन्त्यानुप्रास के काव्य की कल्पना शायद असम्भव है और इसी से नाद सौन्दर्य भी उत्पन्न किया जाता है। विद्यापति ने भी अपनी पदावली में संगीतात्मकता के लिए अत्यानुप्रास की अनिवार्यता को रखा है पदावली में तुक प्रायः दो पद्धति में व्यवहृत हुआ है। कुछ पद क–क, ख–ख, ग–ग, क श्रृंखला बनाते है तथा कुछ पद क–ख, क–ख, ग–घ–ग–घ[8]

पदावली के पदों में अन्त्यानुप्रास (तुक) के द्वारा सुन्दर संगीत का अनुरंजन हुआ है।

''बड़ सुख सार पाओल तुआ तीरे
छोड़इत निकट नयन बह नीरे
करनोरि बिलमओं विमल तरंगे
पुनि दरसन होए पुनमति गंगे
एक अपराध घमव मोर जानी
परमल माए पाए तुम पानी
कि करव जप–तप जोग हो आने
जनम कृतारथ एक हिसनाने'' [9]

''अनुभूति की तन्मयता से मालूम होता है कि कलाओं का स्वरूप भिन्न नहीं जाता है चित्रकार कवि वन जाता है और कवि चित्रकार। चित्रों में से संगीत स्वतः प्रवाहित हो जाता है। कल्पना संगीत पूर्ण उठती है। शब्द तुलिका बन जाते है। उनमें से ध्वनि फूट पड़ती है और रंग गाने लगते है यही कला का अंतिम स्वरूप है।''[10] विद्यापति की पदावली भी इसी प्रकार कभी कवि की कविता, कभी चित्रकार का चित्र और कभी संगीतकार का संगीत हो जाती है उनका काव्य हृदयहारी है। पदावली की संगीतात्मकता ओर लयात्मकता से भाव सौन्दर्य का सागर उमड़ पड़ा है। संगीतात्मकता ने भावों की वो अभिव्यक्ति की है कि गोविन्ददास ने अपनी पदावली से विद्यापति पदावली के आनन्द के विस्तार को नारद के हृदय आनन्द से भी अधिक विस्तीर्ण कहा है जिस आनन्द को नारद अपने हृदय तक सीमित रख सके, उसकी जग–सुख दायिनी दृष्टि, विद्यापति अपने काव्य में कर गए है, मतिमान शेखर ..... विद्यापति के गीतों ने जैसे जग का जी चुरा लिया हैं।'' [11] विद्यापति ने अपनी मौलिक प्रतिभा के बल पर ही जयदेव से प्रभावित होने का बाद भी उससे अप्रभावित रहे है। मैथिल कोकिल कवि विद्यापति की काव्यधारा उस त्रिवेणी के समान है। जिससे एक और श्रृंगार भावना, दूसरी तरफ भक्ति भावना तथा इन दोनों के मिलन बिन्दु पर गुप्त रूप से सरस्वती की आध्यामिक रहस्य भावना आ मिली है। इन तीनों भावनाओं के सानुपातिक सम्मिलन तथा निखरे हुए काव्य सौन्दर्य के कारण ही आज भी विद्यापति की गणना हिन्दी के महान कवियों में की जाती है। उन्हें हिन्दी साहित्य में वही स्थान प्राप्त है। जो संस्कृत साहित्य में महाकवि जयदेव को, जयदेव का अनुसारण करने पर भी विद्यापति के काव्य में मौलिकता का अभाव नही हैं।''[12] अपनी मौलिकता और जयदेव की काव्य परम्परा का पालन करने के कारण ही उन्हें अभिनव जयदेव का अपाधि से अलंकृत किया गया होगा। विद्यापति ने अपनी कोमल कान्त पदावली से जनमानस में संगीत को पूर्ण स्थापित कर दिया था। साधारण जनमानस अपने जीवन के प्रत्येक रंग से इस संगीत को प्राथमिकता के साथ गाया है। विद्यापति की पदावली के कारण मिथिला की स्त्रियों में संगीत एक प्राण हो रहा है। उपनयन विवाह, मुंडन, पूजा आदि किसी भी शुभ अवसर पर स्त्रियाँ मिलकर मधुर स्वर से जब विद्यापति के गीत गाती है तो स्वाभाविक संगीत का रूप उपस्थित हो जाता है। पुरूषों में भी महेशवाणी नाचारी आदि प्रचलित है।''[13] विद्यापति के काव्य पर संगीत का प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। अपनी पदावली के माध्यम से उन्होंने अनेक नये राग रागिनियों छन्दों में रचनाएं की और नवीन तत्वों को जोड़ा। इनका काव्य शास्त्रीय तथा लोक संगीत दोनों शैलियों का समिश्रण है। शास्त्रीय शैली में जोड़कर लोक शैली का अनुसरण करते हुए नये छन्दों, नये गेय गीतों की रचना की। लोक शैली के प्रभाव के कारण ही इनकी पदावली जन साधारण के कंठहार बन कर सम्पूर्ण बंगाल बिहार, उड़ीसा और असम में आज तक अनपढ नर नारियों में लोक प्रिय है। संगीत के साथ भावों की उत्कृष्टता और स्वाभाविक वर्णन के कारण ही लोक मानस आज शताब्दियों बाद भी इसे जस के तस स्वीकार किये हुए है। पदावली की संगीतात्मकता बेजोड़ है। विद्यापति के बाद भी अनेकानेक कवियों ने विद्यापति का अनुसरण करने का प्रयास किया परन्तु संगीत की जो महक विद्यापति की पदावली में मिलती है उसे कोई छु भी नहीं पाया, विद्यापति ने उस काल की 'देसिल बयना' अर्थात लोक भाषा मैथिली में गेय पदों की रचना की जो न केवल मिथिला के नारी एवं पुरूषों के कंठ में विराजित हो गये, अपितु बंगाल, उडीसा, असम तथा नेपाल तक में अत्यन्त लोक प्रिय हुए। इतना ही नहीं बाद के अनेक कवियों ने भी विद्यापति की रचना शैली का अनुसरण किया।'' [14] इसी क्रम में पिंकी शुक्ला ने सूर और विद्यापति के काव्य की तुलना करते हुऐ, लिखते है विद्यापति के गीतों की सबसे बड़ी विशेषता है उनकी विलक्षण संगीतात्मकता। सूरदास जी के पदों को बिना लय के और ध्वन्यात्मक संगीत के पढा जा सकता है, किन्तु विद्यापति के गीतों में एक भी पद ऐसा न मिलेगा जो बिना लय व संगीतात्मकता के पढा जा सके। इसके भतिरेक उसमे एक विशेष बात यह भी है कि उनके पदों

को पढ़ने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि पाठक संगीतज्ञ ही हो प्रत्येक पद अपने आप में संगीत की निधि बटोरे हुऐ है। यह उनकी गेयता का चरमोत्कर्ष है।[15] राजाश्रय में रह कर लोकाश्रयी कविता करना तात्कालिक कवियों के लिए आसान नहीं था। जिस राजनीतिक और सामाजिक सांस्कृतिक परिवेश में विद्यापति थे उसमें लोकोन्मुखी काव्य रचना करना अपने आप में महत्वपूर्ण बात है। सामंती कवि होकर लोकोन्मुखी होने वाले कवि विद्यापति ही है, जिन्होंने राजा के वर्णन से अधिक प्रजा का वर्णन किया है। दरबारी वातावरण में जा कर साहित्य कुत्सित हो जाता है परन्तु महाकवि विद्यापति का व्यक्तित्व कमल की तरह है जो राज दरबार से पोषण पाकर भी स्वतंत्र विकास कर सका। कमल की भांति सर्वजन सुलभ भव्य रूप उनका रहा है।[16] लोक शैली में ही कवि ने अनेक पदों की रचना अनेक विषयों पर की जिनमें संगीत का अदभुत मिश्रण है कवि के प्रमुख विषय–देवी वंदना, वयः संधि, नख शिख वर्णन, प्रेम प्रसंग, अभिसार, बसंत, विरह, प्रार्थना, गंगा स्तुति, कृष्ण कीर्तन, नारी नयन, सौन्दर्य चित्रण, नोक–झोंक, भावोंल्सास, मान, पति वियोग, कौतुक, छलना आदि है जिनमें विभिन्न रागों का सुन्दर प्रयोग किया गया है। विद्यापति की पदावली में विभिन्न रागों यथा राग मालव, राग धनाक्षरी, राग मलारी, (मल्हार) राग मैथिल, मालव राग माधनी बराडी राग को लार, केदार राग, सारड़गी राग, राग गोपी वल्लभ, बंसन्त राग देश देशाख, शुद्ध सुबह, काम सुबह, आसावरी राग, बरलीराग, राग ललित, विभास राग, राग गुर्जरी, राग ललित, राग वितत–मालव, जोगिय आसावरी राग, राग अहिरानी, राग सारंगी, राग मठियाली, देश राग करीय धन्या भीमपलासी राग, श्रीमालव राग, नाट राग, राग सिन्धु लासावरी सुहव राग, श्री राग आदि तीसियों राग प्रमुख है। मिथिला की अमराईयों में अपनी कोमल कूक से सहृदय जनों में हूक पैदा करने वाली मैथिल कवि कोकिल कवि विद्यापति की गेय कविताऐं मंदिर से लेकर अंतः पुर तक जन–जन की जिव्हाओं पर देदीप्यमान है।[17] उक्त सम्पूर्ण विवेचन से स्पष्ट होता है कि कवि विद्यापति केवल संगीत प्रेमी ही नहीं वरन संगीत मर्मज्ञ भी है। विभिन्न राग रागिनियों में बिखरा पड़ा उनका काव्य राजाश्रित होने पर भी दरबारी गन्ध से स्वर्था अछूता है। पदावली की गेयता और संगीतात्मकता को देखकर ये कयास नहीं लगाया जा सकता की वे दरबारी वातावरण में रहे होगे। कवि का संगीत ज्ञान अत्यन्त प्रौढ था। जिसमें विषय ओर परिस्थितियों की अनुकूलता सर्वत्र विद्यमान थी। विद्यापति की पदावली गीति काव्य और संगीात्मकता की उत्कृष्ट नमूना है।

संदर्भ सूची

1. उपाध्याय अयोध्यासिंह, विद्यापति की पदावली पृष्ठ संख्या 1
2. सिंह शिवप्रसाद, विद्यापति, हिन्दी प्रचार पुस्तकालय वाराणसी पृष्ठ संख्या 206
3. वही – पृष्ठ संख्या 207
4. वहीं – पृष्ठ संख्या 207
5. वहीं – पृष्ठ संख्या 208
6. वहीं – पृष्ठ संख्या 209
7. कविता कोश– विद्यापति
8. झा उमानाथ, विद्यापति गीत शती (मैथिली) प्राक्कथन से
9. कविता कोष, विद्यापति
10. शुक्ला पिंकी, बिहार के सांस्कृतिक परिवेश में मिथिलांचल का सांगीतिक योगदान
11. (शोध प्रबन्ध) दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली –2008 पृष्ठ संख्या 119
12. शर्मा कृष्ण देव, विद्यापति की काव्य साधना, हिन्दी साहित्य संस्थान पट्टना पृष्ठ संख्या 214
13. कपूर डॉ. शुभकर विद्यापति और उनका काव्य, गंगा पुस्तक माला कार्यालय पृष्ठ संख्या 53
14. ठाकुर सिंहासन सिंह, मिथिलांक ललित कलाएं पृष्ठ संख्या 186
15. नाहटा डॉ. साहित्य कुमार, छायानट (पत्रिका) संगीत नाटक अकादमी लखनऊ, अप्रेल –जून 2006 लेख– महाकवि विद्यापति का सांगीतिक अनुशीलन
16. शुक्ला पिंकी, बिहार के सांस्कृतिक परिवेश में मिथिलांचल का सांगीतिक योगदान (शोध प्रबन्ध) दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली –2008 पृष्ठ संख्या 163
    मिश्र डॉ. चन्द्रनाथ, भैरवी (संगीत शोध पत्रिका) दरभंगा अंक–6 2012 लेख गीत संगीत के महान कलाकार विद्यापति पृष्ठ संख्या 67
17. झा डॉ. रामकिशोर सं. मिथिला सांस्कृतिक संगम प्रयाग (बातचीत)